हमारी पुण्य भूमि और इसका गौरव मय अतीत
(स्वामी विवकानंद के भाषण का अंश)

संकलित–एकनाथ रानाडे

लेखक–परिचय

भारत भूमि के पाद–प्रदेश में स्थित कन्याकुमारी का अभिषेक करती सागर त्रय की उतुंगलहरों के बीच साकार स्वामी विवेकानंद शिला–स्मारक विश्व–मानस को ज्ञान भक्ति, वैराग्य तथा प्राणी–सेवा का पावन संदेश वर्षों से प्रसारित कर रहा है। शिला स्मारक का स्मरण आते ही एक मनस्वी, सेवा–समर्पण की प्रतिमूर्ति तथा मूक व्यक्तित्व श्री एकनाथ रानाडे का नाम हमारी स्मृति में उभर आता है, जो स्वामी विवेकानन्द शिला स्मारक के सूत्रधार तथा शिल्पी रहे।

एकनाथ रानाडे का जन्म महाराष्ट्र के अमरावती जिले के टिटोली ग्राम में हुआ था। ग्रामीण पृष्ठ भूमि के कारण शिक्षा की पर्याप्त व्यवस्था नहीं होने से एकनाथ अपने अग्रज के पास अध्ययन के लिए नागपुर आ गये। यहाँ से माध्यमिक शिक्षा परीक्षा उत्तीर्ण करने के साथ संगठनात्मक कार्यों की ओर प्रवृत्त हुए। सन् 1936 में शिक्षा पूर्ण करके संगठन कार्य हेतु प्रवासी कार्यकर्ता बनकर मध्यप्रदेश में रहे, इसी अवधि में डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय (सागर विश्वविद्यालय) से तत्त्वज्ञान विषय में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की। विभिन्न दायित्वों का निर्वहन करते हुये समाज और राष्ट्र की सेवार्थ जीवन के अंतिम क्षणों तक स्वयं को समर्पित रखा।

एकनाथ रानाडे कुशल संगठनकर्त्ता, प्रभावीवक्ता, योजनाकार, सत्याग्रही तथा स्वामी विवेकानंद शिला स्मारक के योजनाकार वास्तुविद् एवं निर्माता के रूप में जनमानस के केन्द्र में रहे हैं। आपके द्वारा स्वामी विवेकानंद के शिकागो प्रवास के भाषणों, प्रवचनों का संकलन 'उत्तिष्ठत! जाग्रत!!' में किया गया है, जिसके कई संस्करण भारतीय जनता के मन में अपना स्थान बना चुके हैं।

पाठ–परिचय

प्रस्तुत भाषण का अंश हमारी पुण्यभूमि और उसका गौरवमय अतीत एकनाथ रानाडे द्वारा संकलित तथा देवेन्द्र स्वरूप अग्रवाल द्वारा अनुवादित उत्तिष्ठत! जाग्रत!! में से लिया गया है। जिसमें पुण्यभूमि भारत का गौरवमय अतीत, आर्य जाति की अवधारणा, उसकी विश्लेषणात्मक मेधा तथा उसकी कालजयी अमृत संतानों का सौम्य परिचय दिया गया है। इस पुण्य भूमि ने सृष्टि की प्राचीनता से अर्वाचीनता के विराट कालखण्ड में ज्ञान, विज्ञान भौतिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्र में जो योगदान दिया है, वह विश्वमानवता के लिये अनुकरणीय है। पश्चिमी विचारों को जीती परमुखापेक्षिता तथा हीनता बोध से ग्रस्त भारतीय युवा पीढी के लिये सद्मार्ग तथा नवीन आत्मबोध की प्रेरणा देंगी। स्वामी जी के भाषण की भाषा काव्यमयी ओजयुक्त, प्रभावी, भावों की गंभीरता लिये गहन चिंतनयुक्त है।

यदि इस पृथ्वीतल पर कोई ऐसा देश है, जो मंगलमयी पुण्यभूमि कहलाने का अधिकारी है, ऐसा

देश, जहां संसार के समस्त जीवों को अपना कर्मफल भोगने के लिये आना ही है– ऐसा देश जहां ईश्वरोन्मुख प्रत्येक आत्मा का अपना अन्तिम लक्ष्य प्राप्त करने के लिये पहुँचना अनिवार्य है, ऐसा देश जहाँ मानवता ने ऋजुता, उदारता, शुचिता एवं शांति का चरमशिखर स्पर्श किया हो–तथा इन सबसे आगे बढ़कर भी जो देश अन्तर्दृष्टि एवं आध्यात्मिकता का घर हो–तो वह देश भारत ही है।

****

अतीत गाथा

भारत का प्राचीन इतिहास अलौकिक उद्यम एवं उनके बहुविध प्रदर्शन, असीम उत्साह,, विभिन्न शक्तियों की अप्रतिहत क्रिया और प्रतिक्रिया के समन्वय तथा इन सबसे परे एक देवतुल्य जाति के गंभीर चिंतन की अपूर्व गाथा है। यदि 'इतिहास' शब्द का अर्थ केवल राजे–रजवाड़ों की कथाओं से ही लिया जाये, यदि केवल समाज–जीवन के उस चित्रण को ही इतिहास माना जाये, जिसमें समय–समय पर होने वाले शासकों की कलुषित वासनाओं, उद्दण्डता और लोभवृत्ति का नग्न ताण्डव देख पड़ता हो, अथवा उन शासकों के अच्छे–बुरे कृत्यों तथा उनके तत्कालीन समाज पर परिणाम के विवेचन को ही 'इतिहास' की संज्ञा दी जाये–तो शायद भारत में ऐसा कोई इतिहास ग्रन्थ नहीं मिलेगा। किन्तु भारत के विशाल धार्मिक साहित्य, काव्य–सिन्धु, दर्शन–ग्रन्थों एवं विभिन्न शास्त्रों की प्रत्येक पंक्ति हमारे समक्ष विशिष्ट राजाओं की वंशावलियों एवं जीवन चरित्रों की अपेक्षा सहस्र गुना अधिक स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करती है, प्रगति उस महा अभियान के प्रत्येक चरण का जब सभ्यता के विहान के बहुत पूर्व एक विशाल मानव समूह ने भूख–प्यास से परिचालित, लोभ, मोह से प्रेरित, सौन्दर्यतृष्णा से आकर्षित होकर अनेक मार्गों और उपायों का आविष्कार कर पूर्णता की परमावस्था को प्राप्त कर लिया था। यद्यपि विपरीत परिस्थितियों के भीषण झंझावातों ने प्रकृति के विरूद्ध उनके युग–युगों तक संघर्ष के परिणामस्वरूप एकत्र हुई असंख्य जय–पताकाओं को जीर्ण–शीर्ण कर डाला और काल के थपेड़ों ने उन्हें जर्जर कर डाला, तथापि वे आज भी भारत के अतीत गौरव की गाथायें गा रही हैं।

आर्य जाति

आज यह जानने का हमारे पास कोई उपयुक्त साधन नहीं है कि यह जाति मध्य एशिया उत्तर योरप या उत्तरी ध्रुव प्रदेश से धीरे–धीरे आगे बढी और क्रमशः आगे बढते हुए अंत में इसने भारतवर्ष में बस कर उसे पवित्र बनाया अथवा भारत की यह पुण्य–भूमि ही इसका मूल स्थान रही है।

आज हमारे पास कोई भी ठोस आधार यह सब प्रमाणित करने के लिये नहीं है कि हमारे भारत के अन्दर अथवा बाहर बसी हुई इस विशाल जाति ने ही प्राकृतिक नियमों के अनुसार अपने मूल स्थान से निष्क्रमण कर कालान्तर में यूरोप एवं अन्य स्थानों पर अपने उपनिवेश बसाये अथवा इन लोगों का वर्ण श्वेत था या कृष्ण, उनकी आंखें नीली थी या काली उनके केश सुनहरे थे या काले। केवल संस्कृत भाषा की कतिपय योरोपीय भाषाओं से घनिष्टता का अकेला तथ्य आज हमारे पास है।

इस प्रकार इस अन्तिम निष्कर्ष पर पहुंचना भी सरल नहीं है, कि हम सभी वर्तमान भारतीय उस जाति के शुद्ध वंशज हैं, अथवा हमारी रगों में उनका कितना रक्त बह रहा है अथवा हममें कितनी ऐसी जातियाँ हैं–जिनमें उस रक्त का लेशमात्र भी है। कुछ भी हो, इन प्रश्नों का अन्तिम हल नहीं निकलता है तो

हमारी कोई विशेष हानि नहीं है।

परन्तु एक बात ध्यान में रखनी होगी कि जिस प्राचीन भारतीय जाति में सभ्यता की किरणें सर्वप्रथम उदित हुईं, जिसमें गहन चिन्तनशीलता ने स्वयं को अपनी पूर्ण आभा के साथ सर्वप्रथम प्रसारित किया, उस जाति के हजारों, लाखों पुत्र, उसी मेधा के अंशभूत–आज भी उन समस्त भावों एवं चिन्तन के उत्तराधिकारी के रूप में विद्यमान हैं।

नदी, पर्वत एवं समुद्रों को लांघकर, देश काल की बाधाओं को मानों नगण्य कर भारतीय चिन्तन का रक्त भूमण्डल पर रहने वाली अन्य जातियों की नसों में अनेक जाने–अनजाने स्पष्ट अनिर्वचनीय मार्गों से अब तक प्रवाहित हुआ है और आज भी हो रहा है। सम्भवतः विश्व की पुरातन ज्ञानराशि का बहुतांश हमारी देन है।

विश्लेषणात्मक मेधा

'नासतः सत् जायते!' निरस्तित्व में से अस्तित्व का जन्म नहीं हो सकता है।..... जिसका अस्तित्व है, उसका आधार निरस्तित्व नहीं हो सकता। शून्य में से ''कुछ'' सम्भव नहीं है। यह कार्य कारण सिद्धांत सर्व शक्तिमान है और देश कालातीत है। इस सिद्धान्त का ज्ञान उतना ही पुराना है जितनी आर्य जाति। सर्वप्रथम आर्यजाति के पुरातन ऋषि कवियों ने इसका गान किया, उसके दर्शनिकों ने इसका प्रतिपादन किया और उस आधार शिला का रूप दिया जिसके ऊपर आज भी सम्पूर्ण हिन्दू जीवन का प्रासाद खड़ा होता है।

एक अपूर्व जिज्ञासा लेकर इस जाति ने अपनी यात्रा आरम्भ की। किंतु शीघ्र ही वह एक निर्भीक विश्लेषण में परिणत हो गई। यद्यपि उनकी प्रारम्भिक कृतियों को देखकर लगता है मानों भावी किसी श्रेष्ठ कलाकार ने कांपते हाथों बनायी हो, तथापि शीघ्र ही उसने आश्चर्यजनक परिणाम दिखाये, उसकी कृतियों में अपूर्व सुघड़ता आ गयी और उसने एक अति वैज्ञानिक शास्त्र को जन्म दिया।

इस साहसी जाति ने अपनी यज्ञवेदियों की प्रत्येक ईंट को छान डाला, अपने शास्त्रों के प्रत्येक स्वर–अक्षर को छाना–बीना, परखा और जोड़ा, अपने सम्पूर्ण कर्मकाण्ड को शंका, अस्वीकृति एवं समाधान की मंजिलों से पार कर कई बार व्यवस्थित रूप प्रदान किया।

इस जाति ने कभी अपने देवताओं को उलट–पलट कर परखा तो कभी अपने उस प्रजापति को, जिसे वे अब तक सृष्टि का सर्वशक्तिमान, सर्व व्यापक, सर्वद्रष्टा जन्मदाता मानते आये थे, केवल गौण स्थान दिया, तो कभी उसे बिल्कुल अनुपयोगी कहकर किनारे फेंक दिया और उसके बिना ही एक विश्वधर्म (बौद्ध धर्म) का श्रीगणेश किया, जिसके आज भी संसार में किसी अन्य धर्म से अधिक अनुयायी हैं।

इस जाति ने विविध प्रकार की वेदियों की रचना में ईंटों की व्यवस्था से रेखा–गणितशास्त्र का विकास किया और अपनी उपासना तथा यज्ञों को निश्चित समय पर करने के प्रयास में ज्योतिष शास्त्र को जन्म दे संसार को चकित कर दिया।

इस जाति ने गणित शास्त्र को संसार की किसी भी अर्वाचीन अथवा प्राचीन जाति से कहीं अधिक योगदान किया। रसायन शास्त्र, वैद्यक शास्त्र एवं संगीत शास्त्र के अपने ज्ञान तथा वाद्य यंत्रों के आविष्कार

के द्वारा आधुनिक योरोपीय सभ्यता के निर्माण में भारी सहायता पहुँचायी ।

इस जाति ने ही आकर्षक कथाओं के माध्यम से शिशु–मस्तिष्क को संस्कारित करने के शास्त्र का आविष्कार किया। आज भी प्रत्येक सभ्य देश के शिशु–विद्यालयों में प्रत्येक शिशु को उसी पद्धति से पढ़ाया जाता है और वह जीवन पर्यन्त इन संस्कारों को लेकर चलता है।

इस विश्लेषणात्मक जिज्ञासा के आगे और पीछे, उसके चारों ओर एक मखमली आवरण के रूप में विद्यमान उस जाति की एक अन्य महान् बौद्धिक विशेषता है–और वह है उसकी कवित्वमय अन्तर्दृष्टि। उसका धर्म उसका दर्शन, उसका इतिहास, उसका नीतिशास्त्र उसका राज्यशास्त्र, सब काव्यमयी कल्पना के पुष्प–कुंज में सजा दिये गये हैं और यह सब चमत्कार है उस संस्कारित भाषा का, जिसे हम ''संस्कृत'' कहते हैं, जिसके अतिरिक्त किसी अन्य भाषा में उन्हें इससे अधिक अच्छी प्रकार व्यक्त करना न सम्भव था न है। यहाँ तक कि गणित शास्त्र के कठोर तथ्यों की अभिव्यक्ति के लिये भी उस भाषा ने हमें संगीतमय अंक प्रदान किये।

यह विश्लेषणात्मक शक्ति तथा साहसी कवित्वदृष्टि ही हिन्दू जाति की मनोरचना में वे दो महातत्त्व हैं जिन्होंने उसे आगे बढने की प्रेरणा दी। वे दोनों मिलकर हमारे राष्ट्रीय चरित्र का केन्द्र बिन्दु बन गये। इनके समन्वय ने ही जाति को सदैव इन्द्रियों के परे बढ़ने की शक्ति दी। यही हमारी उन लचीली कल्पनाओं का मूल रहस्य है, जो किसी शिल्पी द्वारा निर्मित उन लौहपत्रों के समान है, जो यद्यपि कठोर लौह स्तम्भ में से काटकर निकाले गये हैं तथापि इतने लचीले हैं कि उन्हें सरलतापूर्वक वृत्ताकार किया जा सकता है।

उन्होंने कविता की; सोने और चांदी में, रत्नों की जड़ावट में, संगमरमर के अद्‌भुत फर्शों में, अनेक स्वरों के संगीत में तथा आश्चर्यजनक वस्त्रों में, जो वस्तु जगत की अपेक्षा स्वप्न जगत के प्रतीत होते हैं उन सभी के पीछे इस राष्ट्रीय वैशिष्ट्य का सहस्रों वर्ष लम्बा इतिहास विद्यमान हैं।

सम्पूर्ण कलाओं और शास्त्रों यहाँ,तक कि पारिवारिक जीवन की कठोर वास्तविकताओं को भी इन कवित्वमयी धारणाओं के आवरण से ढक दिया गया है। ये धारणायें तब तक आगे बढायी गयी हैं जब तक इंद्रियगम्य का संयोग अतीन्द्रिय से नहीं हो जाता और दृश्य में अदृश्य की सुगन्ध नहीं आ जाती।

इस जाति की प्राचीनतम झाँकियों में भी हम उसे इस वैशिष्ट्य से सम्पन्न और उसके प्रयोग में कुशल पाते हैं। निश्चित ही वेदों में इस जाति का जो चित्र हमें मिलता है उसके निर्माण के पूर्व उसने धर्म और समाज के अनेक रूपों एवं अवस्थाओं को पार कर पीछे छोड़ दिया होगा।

वेदों में एक सुगठित देवशास्त्र, विस्तृत कर्मकाण्ड विविध व्यवसायों की आवश्यकता की पूर्ति के हेतु जन्मगत–वर्गों पर आधारित समाज रचना एवं जीवन की अनेक आवश्यकताओं तथा अनेक विलासिताओं का वर्णन उपलब्ध है।

आध्यात्मिकता का आदिस्रोत

यही वह पुरातन भूमि है जहाँ ज्ञान ने अन्य देशों में जाने के पूर्व अपनी आवास भूमि बनाई थी–यही वह भारतवर्ष है, जिसके आध्यात्मिक प्रवाह के भौतिक प्रतीक ये समुद्राकार नद हैं और चिरन्तन हिमालय एक तह पर दूसरी तह चढ़ा कर अपने हिममण्डित शिखरों द्वारा मानो स्वर्ग के रहस्यों में ही झांक

रहा है। यह वही भारतवर्ष है जिसकी धरा को महानतम ऋषियों की चरणरज पवित्र कर चुकी है।

यहीं सर्वप्रथम मानव–प्रकृति एवं अन्तर्जगत के रहस्यों की जिज्ञासाओं के अंकुर उगे थे यहीं आत्मा की अमरता, एक परमपिता परमेश्वर की सत्ता, प्रकृति और मनुष्य के भीतर ओत–प्रोत एक परमात्मा के सिद्धांत सर्व प्रथम उठे और यही धर्म तथा दर्शन के उच्चतम सिद्धान्तों ने अपने चरम शिखर स्पर्श किये। इसी भूमि से अध्यात्म एवं दर्शन की लहर पर लहर बार–बार उमड़ी और समस्त संसार पर छा गयी।

देवत्व प्राप्ति के लिये संघर्ष

क्या अद्‌भुत देश है यह! इस पुण्य भूमि पर चाहे जो खड़ा हो–वह इसी भूमि का पुत्र हो अथवा विदेशी– यदि उसकी आत्मा दुर्दान्त पशुओं के स्तर तक नहीं गिर चुकी है–तो वह स्वयं को पृथ्वी के इन श्रेष्ठतम एवं शुद्धतम पुत्रों के तेजोमय विचारों से घिरा हुआ अनुभव करेगा, जो शताब्दियों तक पशु को देवत्व के शिखर तक उठाने के लिये कार्य करते रहे हैं और जिनका आरम्भ खोजने में इतिहास भी असफल रहा है। यहाँ का वायु मण्डल ही आध्यात्मिकता की तरंगों से ओतप्रोत है।

यह देश दर्शन, आध्यात्मिकता, नीतिशास्त्र एवं उन सबका पुण्य धाम है जो मनुष्य को पशुत्व के विरूद्ध उसके सतत् संघर्ष में विश्रामस्थल प्रदान करता है। यह देश ही वह साधना भूमि है जिसके द्वारा मनुष्य अपने कर्त्ता के आवरण को फेंककर अजर–अमर, आदि–अन्त रहित आत्मा का साक्षात्कार कर सकता है। यही देश है जहां सुखों का प्याला भरा रहा और उससे भी अधिक भरा रहा दुखों का प्याला–किन्तु तभी तक, जब मानव को सर्वप्रथम यह पता न चला कि यह सब मिथ्या है, माया है। यहीं सबसे पहले यौवन के पूर्ण विकास में पर भोग–विलासों की गोद में शक्ति और यश के चरम शिखर पर आसीन मनुष्य ने माया की जंजीरों को तोड़ डाला।

यहीं मानवता के समुद्र में आनन्द और पीड़ा, सामर्थ्य और दौर्बल्य, वैभव और दारिद्रय, सुख और दुख, हास्य और रूदन जीवन और मृत्यु की शक्तिशाली लहरों के घात–प्रतिघात के आलोड़न के बीच दिव्य शांति और शाश्वत निस्तब्धता की तीव्र आकांक्षा में से वैराग्य का सिंहासन प्रकट हुआ।

यहाँ इसी देश में सर्वप्रथम ''जन्म'मरण की कठिन समस्या है, जीवन की तृष्णा और उसे बनाये रखने के लिये, वृथा घोर संघर्ष जिनका परिणाम केवल दुःखों के संचय में हुआ, इन सब समस्याओं का सामना किया गया और उन्हें हल किया गया। उनको इस तरह हल कर दिया गया मानों वे कभी पहले थी ही नहीं और आगे कभी रहेंगी भी नहीं। यहाँ और केवल यहाँ ही यह खोज हुई कि जीवन स्वयं भी एक अभिशाप है और किसी ऐसी सत्ता की प्रतिच्छाया मात्र है, जो एकमेव सत्य है।

यही वह देश है जहाँ धर्म को व्यावहारिक एवं सच्चा रूप प्राप्त हुआ और केवल यहीं स्त्री तथा पुरूष धर्म के अन्तिम लक्ष्य का साक्षात्कार करने के लिये साहसपूर्वक कूद पड़े। बिल्कुल उसी प्रकार, जिस प्रकार अन्य देशों में लोग जीवन के सुखों को लूटने के लिये पागल होकर कूद पड़ते हैं और अपने कमजोर बन्धुओं को लूट लेते हैं।

यहीं और केवल यहीं मानव अन्तः करण का विस्तार इतना अधिक हुआ कि उसमें न केवल सम्पूर्ण मानव जाति समा गयी अपितु पशु–पक्षी और पेड़–पौधों को भी स्थान मिल गया। उच्चतम देवताओं से लेकर रेत के कणों तक महानतम से निम्नतम तक सब कोई उस विशाल अनन्त मानव अन्तःकरण में स्थान

पा गये और केवल यहीं मानव आत्मा ने सकल ब्रह्माण्ड को अविच्छिन्न अखण्ड इकाई के रूप में देखा और उसकी प्रत्येक धड़कन को अपनी धड़कन जाना।

सौम्य हिन्दू

सम्पूर्ण विश्व पर हमारी मातृभूमि का महान् ऋण है। एक–एक देश को लें तो भी इस पृथ्वी पर दूसरी कोई जाति नहीं है, जिसका विश्व पर इतना ऋण है जितना कि इस सहिष्णु एवं सौम्य हिन्दू का! ''निरीह हिन्दू'' कभी–कभी ये शब्द तिरस्कारस्वरूप प्रयुक्त होते हैं किन्तु यदि कभी किसी तिरस्कार युक्त शब्द प्रयोग में भी कुछ सत्यांश रहना सम्भव हो तो वह इसी शब्द प्रयोग में है। यह निरीह हिन्दू सदैव ही जगत्पिता की प्रिय सन्तान रहा है।

प्राचीन एवं अर्वाचीन कालों में शक्तिशाली एवं महान् जातियों से महान् विचारों का प्रादुर्भाव हुआ है। समय–समय पर आश्चर्यजनक विचार एक जाति से दूसरी के पास पहुंचे हैं। राष्ट्रीय जीवन में उमड़ते हुए ज्वारों ने अतीत में और वर्तमानकाल में महासत्य और शक्ति के बीजों को दूर–दूर तक बिखेरा है। किन्तु मित्रों! मेरे शब्द पर ध्यान दो। सदैव यह विचार संक्रमण रणभेरी के घोष के साथ युद्धरत सेनाओं के माध्यम से ही हुआ है। प्रत्येक विचार को पहले रक्त की बाढ में डूबना पड़ा। प्रत्येक विचार को लाखों मानवों की रक्त धारा में तैरना पड़ा। शक्ति के प्रत्येक शब्द के पीछे असंख्य लोगों का हाहाकार अनाथों की चीत्कार एवं विधवाओं का अजस्र अश्रुपात सदैव विद्यमान रहा। मुख्यतः इसी मार्ग से अन्य जातियों के विचार संसार में पहुँचे।

जब ग्रीस का अस्तित्व नहीं था रोम भविष्य के अन्धकार के गर्भ में छिपा हुआ था, जब आधुनिक योरपवासियों के पुरखे जंगलों में रहते थे और अपने शरीरों को नीले रंग से रंगा करते थे उस समय भी भारत में कर्मचेतना का साम्राज्य था। उससे भी पूर्व, जिसका इतिहास के पास कोई लेखा नहीं, जिस सुन्दर अतीत के गहन अन्धकार में झांकने का साहस परम्परागत किवंदन्ती भी नही कर पाती, उस सुदूर अतीत से अब तक भारतवर्ष से न जाने कितनी विचार–तरंगे निकली हैं, किन्तु उनका प्रत्येक शब्द अपने आगे शांति और पीछे आशीर्वाद लेकर गया है। संसार की सभी जातियों में केवल हम ही हैं जिन्होंने कभी दूसरों पर सैनिक विजय प्राप्ति का पथ नहीं अपनाया और इसी कारण हम आशीर्वाद के पात्र हैं।

एक समय था जब ग्रीक सेनाओं के सैनिक संचलन के पदाघात से धरती काँपा करती थी। किन्तु पृथ्वीतल पर उसका अस्तित्व मिट गया। अब सुनाने के लिये उसकी एक गाथा भी शेष नहीं। ग्रीकों का वह गौरव सूर्य सदा सर्वदा के लिये अस्त हो गया। एक समय था जब संसार की प्रत्येक उपभोग्य वस्तु पर रोम का श्येनांकित ध्वज उड़ा करता था। सर्वत्र रोम की प्रभुत्ता का दबदबा था और वह मानवता के सर पर सवार थी। पृथ्वी रोम का नाम लेते ही काँप जाती थी परन्तु आज उसी रोम का कैपिटोलिन पर्वत खण्डहरों का ढेर बना हुआ है, जहाँ पहले सीजर राज्य करते थे वहीं आज मकडियाँ जाला बुनती हैं।

इनके अतिरिक्त कई अन्य गौरवशाली जातियां आयीं और चली गयीं, कुछ समय उन्होंने बड़ी चमक–दमक के साथ गर्व से छाती फुलाकर अपना प्रभुत्व फैलाया अपने कलुषित जातीय जीवन से दूसरों को आक्रान्त किया, पर शीघ्र ही पानी के बुलबुलों के समान मिट गयीं। मानव जीवन पर ये जातियाँ केवल इतनी ही छाप डाल सकीं।

किन्तु हम आज भी जीवित हैं और यदि आज भी हमारे पुराण ऋषि–मुनि वापस लौट आये तो उन्हें आश्चर्य न होगा उन्हें ऐसा नहीं लगेगा कि वे किसी नए देश में गए। वे देखेंगे कि सहस्रों–सहस्रों वर्षों के अनुभव एवं चिंतन से निष्पन्न वही प्राचीन विधान आज भी यहाँ विद्यमान हैं अनन्त शताब्दियों के अनुभव एवं युगों की अभिज्ञता का परिपाक–वह सनातन आचार–विचार आज भी वर्तमान है, और इतना ही नहीं, जैसे–जैसे समय बीतता जाता है एक के बाद दूसरे दुर्भाग्य के थपेड़े उन पर आघात करते जाते हैं पर उन सब आघातों का एक ही परिणाम हुआ है कि वह आचार दृढ़तर और स्थायी ही होते जाते हैं। किन्तु इन सब विधानों एवं आचारों का केन्द्र कहाँ है?किस हृदय में रक्त संचालित होकर उन्हें पुष्ट बना रहा है? हमारे राष्ट्रीय जीवन का मूल स्रोत कहाँ है?इन प्रश्नों के उत्तर में सम्पूर्ण संसार के पर्यटन एवं अनुभव के पश्चात मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि उसका केन्द्र हमारा धर्म है।

यही वह भारतवर्ष है जो अनेक शताब्दियों तक शत–शत विदेशी आक्रमणों के आघातों को झेल चुका है। यही वह देश है जो संसार की किसी भी चट्टान से अधिक दृढ़ता से अपने अक्षय पौरूष एवं अमर जीवन शक्ति के साथ खड़ा हुआ है। इसकी जीवन शक्ति भी आत्मा के समान ही अनादि, अनन्त एवं अमर है और हमें ऐसे देश की सन्तान होने का गौरव प्राप्त है।

शब्दार्थ

शुचिता–पवित्रता

कलुषित – गंदा, मैला, अपवित्र

निष्क्रमण – बाहर निकालना

अनिर्वचनीय –अकथनीय, अवर्णनीय

पुरातन– प्राचीन

सौम्य – सुन्दर, कोमल

प्रभुत्व– सत्ता, शासन

अप्रतिहत– बिना रूकावट, अपराजित

विहान– प्रातः, भोर

लेशमात्र – थोड़ा सा

अर्वाचीन– आधुनिक, वर्तमान का

दौर्बल्य – दुर्बलता, कमजोरी

अजस्र– निरन्तर चलने वाला

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. ''हमारी पुण्य–भूमि और उसका गौरवमय अतीत'' किस महापुरूष के भाषण का अंश है?

   (क) स्वामी दयानंद सरस्वती (ख) स्वामी रामतीर्थ

   (ग) स्वामी अखण्डानन्द (घ) स्वामी विवेकानंद ( )

2. स्वामी विवेकानंद शिला स्मारक के आधार स्तम्भ हैं–

   (क) दत्तोपंत ठेंगड़ी (ख) चिन्मयानंद

   (ग) एकनाथ रानाडे (घ) राष्ट्र–बंधु ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. पृथ्वी पर ऐसा देश जो मंगलमयी पुण्यभूमि कहलाने का अधिकारी है। कौन है?नाम लिखिए।
2. सामान्य जन इतिहास का क्या अर्थ ग्रहण करते हैं ?
3. ऐसा कौनसा तथ्य है जो आर्य जाति को भरत–भूमि के मूल से जोड़ता है?
4. नासतः सत् जायते! का तात्पर्य क्या है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. कार्य–कारण सिद्धांत को आर्य जाति ने अपने जीवन में कैसे प्रतिपादित किया?
2. हिन्दू जाति की मनोरचना के दो महातत्त्व कौनसे हैं तथा इनके समन्वय का क्या परिणाम रहा?लिखिए।
3. भारत –भूमि पर मानव अंतःकरण का विस्तार किस प्रकार हुआ?

निबंधात्मक प्रश्न

1. पठित पाठ के आधार पर भारतीय गौरवमय अतीत पर अपने विचार लिखिए।
2. भारतीय आर्य जाति की विश्व को क्या देन है?लिखिए।
3. ''भारतीय जीवन दर्शन विश्लेषणात्मक मेधा से संचालित है।'' कैसे?लिखिए।